☆ मैंने अपने शिष्यों के हृदय में आग प्रज्वलित कर दी है, प्रचण्डता से एक ज्वाला धधका दी है, जो समाज के कूड़े-करकट को जलाने में पूरी तरह सक्षम है।

☆ यह दिव्य अग्नि सक्षम है, दिमाग में जमे हुए जालों को साफ करने में।

☆ यह दिव्य अग्नि, ज्ञान अग्नि-मस्तिष्क में आलोचना, तर्क-कुतर्क का जो मैल भर गया है, उसे खाक कर देने में समर्थ है।

☆ इस ज्ञान अग्नि से शिष्य समर्थ हो गए हैं, समाज की चुनौतियों का जवाब देने में, तुर्की-ब-तुर्की उत्तर देने में, आंखें दिखाने वालों की आंखें नोच लेने में।

☆ शिष्य, पाखण्ड पर प्रहार करने में समर्थ हो गए हैं, ढोंगी बाबाओं की चालबाजियों को ध्वस्त करने में सिद्ध हो गए हैं और समाज से टक्कर लेने में समर्थ हो गए हैं।

☆ ये समर्थ हो गए हैं हिमालय को भी चूर-चूर करने में, विशाल समुद्र को उलीच लेने में और फलक को धरती पर उतार लेने में, क्योंकि मैंने इनके सीने में आग धधका दी है, जोश भर दिया है।

☆ तुम्हारा और मेरा इस जीवन का नहीं, कई-कई जन्मों का सम्बन्ध है, मैं तुमसे कई जन्मों से परिचित हूं।

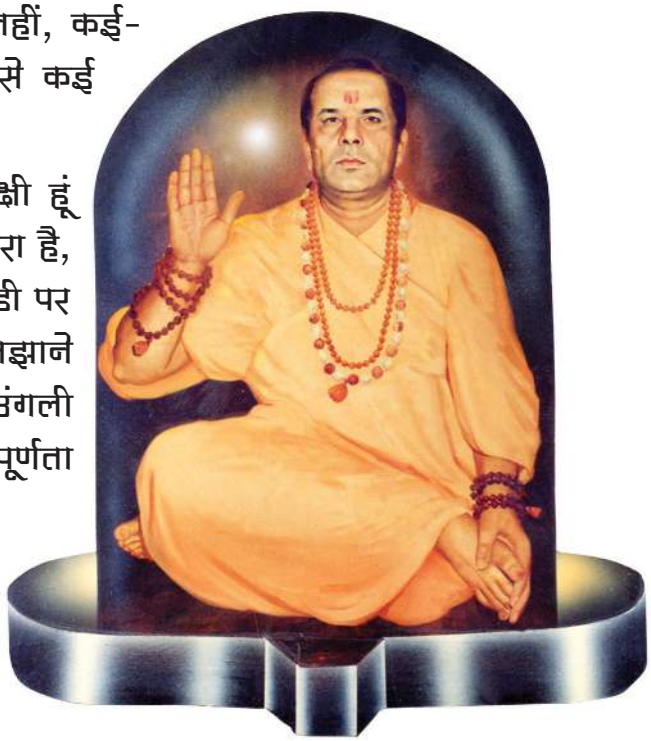

☆ पिछले पच्चीस जन्मों का तो मैं साक्षी हूं ही, और हर जीवन में मैंने तुम्हें पुकारा है, तुम्हें आवाज दी है, जीवन की पगडंडी पर चलने का आह्वान किया है और समझाने की कोशिश की है कि तुम मेरी उंगली पकड़कर चलो मैं तुम्हें निश्चय ही पूर्णता तक पहुंचा दूंगा।

☆ कई शिष्य बीच रास्ते में ही फिसल जाते हैं, मार्ग से भटक जाते हैं, अपना हाथ छुड़ाकर समाज के दलदल में उलझ जाते हैं।

☆ तुम मेरे शिष्य तो हो, तुम सयाने तो हो गए हो, पर बुद्धि के काले लबादे ने तुम्हारे व्यक्तित्व को बांधकर कसमसा दिया है।

☆ तुम्हारा और मेरा परिचय तो कई-कई जन्मों का है, पर तुम डरे हुए हो, भीरू हो, हिचकिचा रहे हो।

☆ तुम कब तक दरवाजे पर खड़े रहोगे, कब तक बाहर ठिठके रहोगे, कब तक दरवाजे की सांकल को ही खटखटाते रहोगे, कब तक संदेह-असंदेह की देहरी पर डोलते रहोगे।

☆ गुरु-हृदय के अन्दर प्रवेश क्यों नहीं कर लेते, दरवाजा तो पूरा खुला हुआ है, और जब तुम्हारा गन्तव्य, लक्ष्य ही इस द्वार में प्रवेश कर अन्दर पहुंचना है तो फिर हिचकिचाहट क्यों?

☆ युग बीत गए, सदियां बीत गईं और तुम ठिठके खड़े हो, इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है?

☆ बढ़ो! 'गुरु हृदय द्वार' खुद आगे बढ़कर तुम्हें निमंत्रण दे रहा है।

शिष्य धर्म

- गुरु का कर्त्तव्य है कि बराबर शिष्य पर प्रहार करे और शिष्य के पास एकमात्र विकल्प है कि उस प्रहार को सहन करे। शिष्य में सहन करने की क्षमता नहीं है तो वह शिष्य नहीं बन सकता, और गुरु में प्रहार करने की क्षमता नहीं है तो वह गुरु नहीं बन सकता।
- शिष्य के सामने यदि कोई गुरु पर प्रहार करता है... शब्दों के माध्यम से या निरर्थक प्रश्न के माध्यम से, और वह चुपचाप सुन ले, या यदि गुरु की निन्दा हो रही हो और वह सुन ले, तो उससे बड़ा पापी इस संसार में कोई नहीं।
- शिष्य की पूंजी केवल तीन चीजें होती हैं, चौथी अगर शिष्य के पास है तो वह शिष्य नहीं है। शिष्य के पास चौथी चीज होनी ही नहीं चाहिए, उसके पास केवल समर्पण होता है, उसके पास सेवा होती है, उसके पास श्रद्धा होती है।
- गुरु जैसा करे वैसा तुम्हें करने की जरूरत नहीं है, गुरु जैसा कहे वैसा करने की जरूरत है। गुरु ऐसा क्यों कर रहा है, तुम उसे अभी समझ नहीं पाओगे।
- श्रद्धा के साथ अपने-आप को पूर्णरूप से समर्पित करने की क्रिया का भी भान होना चाहिए, इसलिए नहीं कि तुम्हारे समर्पण करने से गुरु को महानता मिलती है, गुरु की महानता तो उसके ज्ञान से है।
- शिष्य में समर्थता होनी आवश्यक होती है, शिष्य में, गुरुता प्राप्त करने के लिए समर्पण का होना आवश्यक है...और समर्पण का अर्थ है 'त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेवं समर्पयेत्' 'मैं' कुछ हूं ही नहीं।
- गुरु कहे और शिष्य करे, वह तो मामूली मनुष्य है, और गुरु कहे शिष्य करे ही नहीं वह राक्षस है, गुरु नहीं कहे और शिष्य इशारा समझ कर करे, वह देवता है।
- यह तुम पर निर्भर है कि तुम पादपद्म बन सको, तुम विवेकानन्द बन सको। यह तुम्हारे हाथ में है, गुरु तो ज्ञान प्रदान करते है।
- जिस क्षण शिष्य के जीवन में तरंग आती है, जिस क्षण उसके जीवन में आनन्द की हिलोर आती है, तो वह निरंतर अग्रसर होता रहता है, क्योंकि लहर रुकती नहीं है। पत्थर या लकड़ी एक जगह रुक सकते हैं, लहर नहीं रुक सकती।